RNI No. MPHIN/2004/14249

पोस्टल रजि.न.-मालवा डिविजन/337/2017-19

मासिक

मूल्यः 25 /- रूपये

अक्षर वार्ता

कला-मानविकी-समाजविज्ञान-जनसंचार-वाणिज्य-विज्ञान-वैचारिकी की अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका

Inlisted In UGC Journal list at No. 47806 / ISSN 2349 - 7521/ IMPACT FACTOR - 2.891

वर्ष-14 अंक -3, भाग-2 दिसंबर - 2017

Vol - XIV Issue No - III, Part-II December-2017

» aksharwartajournal@gmail.com, » www.facebook.com/aksharwartawebpage, » +918989547427

ISSN 2349 - 7521
RNI No. MPHIN/2004/14249

INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL

मासिक

अक्षर वार्ता

वर्ष-14 अंक -3, भाग-2 दिसंबर - 2017
Vol - XIV Issue No- III, Part-II
December-2017

Email: aksharwartajournal@gmail.com

कला-मानविकी-समाजविज्ञान-जनसंचार-वाणिज्य-विज्ञान-वैचारिकी की अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका
Inlisted In UGC Journal list at No. 47806 / ISSN 2349 - 7521/ IMPACT FACTOR - 2.891

प्रधान संपादक - प्रो.शैलेन्द्रकुमार शर्मा
shailendrasharma1966@gmail.com
संपादक- डॉ.मोहन बैरागी
drmohan128@gmail.com
सपादक मण्डल- डॉ.जगदीशचन्द्र शर्मा (उज्जैन), प्रो.राजश्री शर्मा, डॉ. शशिरंजन 'अकेला' (उज्जैन)
सहयोगी सम्पादक- डॉ.मोहसिन खान (महाराष्ट्र),
सह सम्पादक- डॉ.भेरुलाल मालवीय,डॉ.पराक्रम सिंह, रूपाली सारये
प्रबंध संपादक- कृष्णदास बैरागी,ज्योति बैरागी

शोध-पत्र भेजने संबधी नियम

शोध-पत्र 2500-5000 शब्दो से अधिक नही होना चाहिये। ०. हिन्दी माध्यम के शोध पत्रो को कृतिदेव 010 (Kruti Dev 010) या युनिकोड मगल फोट मे टाईप करवाकर माईक्रोसॉफ्ट वर्ड मे भेजे। ०. अग्रेजी माध्यम के शोध-पत्र टाईम्स न्यु रोमन (Times New Roman) ,एरियल फोट (Arial) मे टाईप करवाकर माईक्रोसॉफ्ट वर्ड मे भेजे। शोध-पत्र की सॉफ्टकॉपी अक्षरवार्ता के ईमेल पर भेजने के बाद हार्ड कॉपी तथा शोध-पत्र मौलिक होने के घोषणा-पत्र के साथ हस्ताक्षर कर अक्षरवार्ता के कार्यालय को प्रेषित करें। ०. Please Follow- APA/MLA Style for formatting अक्षरवार्ता का वार्षिक सदस्यता शुल्क रूपये 650/- छ सौ पचास रूपये एव पजीयन शुल्क रूपये एक हजार पाच सौ का भुगतान बैक द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है।

बैक विवरण निम्नानुसार है- बैक - Corporation Bank,AccountHolder- Aksharwarta
Current Accont NO. 510101003522430 , IFSC- CORP0000762,
Branch- Rishi Nagar,Ujjain,MP,India

भुगतान की मुल रसीद,शोध-पत्र एव सीडी के साथ कार्यालय के पते पर भेजना अनिवार्य है।

संपादकीय कार्यालय का पता- संपादक अक्षर वार्ता
43,क्षीर सागर,द्रविड मार्ग,उज्जैन,मप्र. 456006,भारत,
फोन :- 0734-2550150 मोबा :-8989547427

अनुक्रम

» त्रिलोचन के काव्य में मानव संघर्ष व लोकधर्मिता
डॉ. सपना तिवारी 05

» राधाकृष्णन के अनुसार धर्म
अजीत कुमार शर्मा 09

» अस्मिता को तलाशती विद्रोही नारियाँ : प्रभा खेतान के उपन्यासों में
डॉ. रॉय जोसफ 12

» अज्ञेय का काव्य - विकास
सुषमा माधवराव नरांजे 14

» Self Help Group : Problems and Prospects
(A Popular Proverb is - " God Helps Them, Who Help Themselves)
Dr. Vijay Kumar Jha 18

» Discrimination to Women in Chosen Autobiographies of Indian Women
Dr. Poonam, Dr. Rajani Sharma 21

» भारत में पर्यटन उद्योग के विकास में सूचना प्रोद्योगिकी की उपयोगिता का अध्ययन
आशीष कुमार 27

अक्षर वार्ता
ISSN 2349-7521
Vol - XIV, Issue - III (Part-II), December 2017
"AKSHARWARTA" Monthly International Referred Journal

अज्ञेय का काव्य - विकास

सुषमा माधवराव नरांजे

हिंदी विभाग, एस. एस. गर्ल्स कॉलेज, गोंदिया, महाराष्ट्र

जो साहित्यकार जितना महान होता है, वह अपनी कृतियों मे भी उतना ही विविधताओं से युक्त होता है। साहित्यकार एक सजग एव संवेदनशील प्राणी होता है। अत जीवन-क्रम मे उसे जितने प्रकार के अनुभव प्राप्त होते है वह अपनी रचना मे उन्हे शब्द देने का प्रयास करता है। अज्ञेय का कृतित्व भी उनके व्यक्तित्व के समान ही बहुआयामी है। अज्ञेय एक प्रयोगवादी कवि थे। उन्होंने अपने काव्यो में कई मोड दिए हैं। चरम सत्य की उपलब्धि की दिशा मे सतत् यत्नवान अज्ञेय अपने काव्य-विकास में सतत् पूर्णता की और अग्रसर प्रतीत होते हैं। यही कारण है कि अज्ञेय ने आत्मोपलब्धि की प्रक्रिया मे रूपोयित होकर शाश्वत मूल्यों की प्रतिष्ठा की, साथ ही अपने काव्य सृजन द्वारा उन मूल्यो को सार्थकता दी, अज्ञेय की कविता आधुनिक सभ्यता एव सस्कृति के दबावो की सृजनात्मक अभिव्यक्ति है जिसमे कवि व्यक्तित्व के उन्नयन के साथ-साथ मानवीय संवेदनाओं के विस्तार की बलवती आकांक्षा भी प्रकट हुई है।

अज्ञेय ने जिस समय कविता के क्षेत्र में प्रवेश किया था, उस समय हिंदी कविता मे चार प्रकार की काव्य धाराएँ प्रचलित थी, किसी मे छायावादी वायवीयता का प्राधान्य था तो किसी मे प्रगति के नाम पर सिध्दांत प्रचार का प्रबल आग्रह एक और व्यक्तिवादी गीति-काव्य धारा थी- जिसमें प्रेम एवं व्यक्तिगत आशा-निराशा को ही स्वर दिया गया- तो दूसरी और राष्ट्रीय एव सास्कृतिक चेतना को उदबुद्ध करने का प्रबल प्रयास चल रहा था। इन सब काव्य-धाराओं मे से किसी मे मध्यवर्ग के संघर्षरत मानव की संवेदनात्मक जटिलताओं को बौध्दिक सयम के साथ कलात्मक सावधानी से सृष्ट करने का प्रयास नहीं दिखाई देता था। अज्ञेय ने इस दिशा मे प्रयोग करने की आवश्यकता समझी थी।

उनकी कविता एक व्यक्तिनिष्ठ कवि की कविता है। वे अपने जीवन मे उग्र क्रातिकारी रहे है। स्वतत्रता आदोलन मे कारावास का दड भी उन्होंने कम नही भोगा है, किंतु काव्य की दुनिया मे आप यह सब कुछ नही पायेंगे ''वहाँ नारी के प्रति तीव्र आकर्षण में आबध्द और समर्पित पुरूष मिलेगा, हरी घास पर थोड़ी देर बैठकर शाति का अनुभव करता हुआ व्यक्ति मिलेगा। एकांत रजनी में बरसती हुई चांदनी मिलेगी। अज्ञेय के कवि का वास्तविक और सफल रूप आकपो यहीं मिलेगा, ओर यदि सफल रूप देखना हो तो वहा देखिये जहाँ वे सामाजिक समस्याओं से उलझने का प्रयास करते है, या जहाँ रहस्य के आकाश मे उडने की कोशिश करते हैं।''

अज्ञेय ने सबसे अधिक महत्व दिया है शब्द की अर्थवत्ता की सर्जनात्मक खोज को किंतु इस प्रयास में वे पाठकों के लिए कम ही स्थलो पर दुरूह बन पाये है अन्यथा उनके कथ्य अपनी चित्रात्मकता के कारण विषयम वस्तु को अत्याधिक सवेद्य बनाकर प्रस्तुत करने में समर्थ रहे हैं। अज्ञेय का प्रथम काव्य-संकलन 'भग्नदूत' (1935) का मुख्य स्वर प्रणय-भाव है। अधिकाश कविताओं में कवि ने विगत प्रेम और प्रिय का स्मरण उच्छवासो पूर्ण शब्दों मे किया है। जैसा कि शीर्षक से ही स्पष्ट है। कवि का हृदय टूटा हुआ है और उसकी रागिनी भी टूटे हृदय की अभिव्यक्ति के अनुरूप उच्छवासपूर्ण है किंतु रूदन और हाहाकार की अभिव्यक्ति अपनी जीवन्तता के कारण सहृदय पाठकों के हृदय को भाव-आविल करने मे पूर्ण सक्षम है। सच तो यह है कि यहाँ अज्ञेय का कवि अपने प्रकृत रूप मे व्यक्त हुआ है। यही कारण है कि पाठक को भाव-विभोर बनाने की क्षमता भी उसमें विद्यमान है। कवि अपनी वेदना को भूलने के लिए नाना प्रयास करता है। वह वेदना को संबोधित करते हुए कहता है -

''विकले विश्वक्षेत्र में खोजा
पुजीभूते प्रणय - वेदने
आज विस्मृता हो जा।''

अपनी अवस्था के अनुरूप कवि ने कल्पना प्रसूत अभिव्यक्ति को इसमे प्रधानता दी है। वस्तुत ये अपरिपक्व एवं दुनिया के यथार्थ से अनभिज्ञ तरूण के खण्डित कल्पना पोषित उद्गार है।

'भग्नदूत' मे मानव-प्रणय की भूमिका के रूप में उपार्जित करके 'चिंता' (1942) के रूप में उसका केंद्रीकरण किया गया है। 'चिन्ता' नारी-पुरूष के 'चितन-सघर्ष' से सम्बध काव्य है। दूसरे शब्दों मे इसे 'मानव के प्रेम के आंतरिक इतिहास की अनगढ़ कहानी' भी कहा जा सकता है। अज्ञेय के अनुसार, ''पुरूष और नारी का सम्बंध पति-पत्नि का सम्बन्ध न होकर एक गतिशील सम्बध है। पुरूष और स्त्री की अवस्थिति एक कर्षण की अवस्था, जिसमें बाह्य कोई गति-प्रेरणा नही है, किंतु किसी-न-किसी प्रकार आंतरिक खिंचाव अनिवार्य है। नाटकीय भाषा मे उसे हम पुरूष और स्त्री का संघर्ष कह

सकते है। यही मूल संघर्ष 'चिन्ता' का विषय है।''[2]

'भग्नदूत' में चम्पूकाव्य की तरह गद्य और पद्य दोनों का प्रयोग हुआ है। विषय की दृष्टि से आदि से अंत तक एकरूपता है। इसके दो खंड है- 'विश्वप्रिया' और 'एकायन' दोनों ही खण्डो का वर्ण्य विषय है- पुरूष एव नारी की मन स्थितियों और भावों के घात-प्रतिघातों का चित्रण 'भग्नदूत' में कवि विकलता के स्वर गुंजित करता हुआ-'चिंता' में आकर एक पूर्ति खोज लेता है, 'एकायन' इसी पूर्ति का एक क्रम है। जिसमें पुरूष प्रेमी नारी की मनोभावनाओं को न समझकर उसे अपने रंग में रंगा ही देखना चाहता है।

''रेणु थी जो धूल थी -
आज वह हो गई -
शिरसावतंस इस धूल भरे जग की -
वही जो कभी थी -
जो है रेणु तेरे पगकी।''

और नारी उस पुरूष के लिए अपना सर्वस्व समर्पण कर देती है और उसके चले जाने पर भी समर्पित रहती है। यह समर्पण नारी करती है- पुरूष नहीं, इसलिए नारी की कसक है -
''प्रियतम एक बार और, एक क्षण भर के लिए और।''[3]

जहाँ 'चिंता' का कवि 'प्राचीन अकथ्य कथा' को, सुनाना चाहता है वही 'इत्यलम' (1946) छायावादी अज्ञेय का प्रथम प्रयोगवादी संग्रह है। इसके 'बंदी स्वप्न', 'हिम-हारिल', 'वंचना के दुर्ग' तथा 'मिट्टी की ईहा'- इन चार खण्डो में वे विकास-स्थितियाँ भी निहित है जिनसे गुजरते हुए कवि के स्वरों ने वास्तविक प्रयोगवादी पूर्णता प्राप्त की है। 'बंदी स्वप्न' खण्ड में सच पूछा जाय तो बंदी कवि की आत्मा का रूदन और हाहाकार ही प्रध्वनित है। वह अपनी व्यक्ति की सीमाओं में अधिक आबद्ध है कि लाख चाह कर भी उनसे मुक्त नहीं हो पाता है। जहाँ वह मुक्त हो पाया है वहाँ उसकी भावनाएँ एक व्यापक धरातल पर प्रतिष्ठित होकर अत्यधिक सशक्त बन कर फूटी है।

''तुम सत्ताधारी मानवता के शव पर आसीन -
आज तुम्हें ललकार रहा हूँ, सुनो घृणा का गान।''[4]

अन्यथा सामाजिक शक्तियों से कटे हुए ऐसे व्यक्तित्व के ही दर्शन होते हैं जो अकेले ही सामाजिक अनीतियों से लोहा लेने की घोषणा करता है।

''तुम्हारा यह उद्धत विद्रोही
घिरा हुआ है जग से, पर है सदा अलग निर्मोही।''[5]

और अन्तत: वह या तो सफलता प्राप्त करके संतुष्ट होता है या अपनी असफलता पर सिर धुनता है।

''मैं वह धनु हूँ जिसे साधने में प्रत्यंचा टूट गई।''[6]

'वंचना के दुर्ग' में कवि स्पष्टत: प्रयोगवादी सीढ़ी पर पैर रख देता है और उसमें व्यंग्य का प्राधान्य हो गया है। यह उस भावुकता से भिन्न है जो पूर्ववर्ती रचनाओं में मिलती है। सामाजिक व्यवस्था से असन्तुष्ट कवि-मानस एक ओर तो अपने क्रुद्ध वीर्य की पुकार सुनाता है -

''ठहर-ठहर, आततायी! जरा सुन ले
मेरे क्रुद्ध वीर्य की पुकार आज सुन जा।''[7]

और 'मिट्टी की ईहा' में तो कवि अत्यंत दृढ़ बन गया है तथा उसमें दुर्बोधता भी आ गई है। उसमें कुंठा, घुटन, अनास्था, अविश्वास अब भी है पर वे स्पष्ट न होकर सूत्र रूप में व्यक्त होते है जो बौद्धिकता के कारण अस्पष्ट और दुरूह बन जाते है।

''कितना तुच्छ है तुम्हारा अभिमान,
जो कि मिट्टी को रौंदते हो -
जो कि इहा को रौंदते हो,
क्योंकि मिट्टी ही इहा है।''[8]

कहीं-कहीं लोक गीतों की धुन पर आधृत गीत कवि के हृदय से निसृत होने के कारण आकर्षित करते हैं- उदाहरणार्थ 'माघ-फाल्गुन-चैत'', एक ऋतु गीत, पलाश खिलते है, पतझड आता है और बसंत के अंतिम चरण के साथ एक वृध्दा अवतरित होती है -

''क्रमश: आए
दिन चैती: सौगात नयी क्या लाए ?
बाल बिखरे अपना रूखा सिर धुनती
(नाचे ता-थैया)
बेचारी हर झोंके - भारी विरस अकिंचन
सेमर की बुढिया मैया।''[9]

'इत्यलम' में कवि ने अभिव्यंजना के नये साधनों व माध्यमों से जुझने की बात कही थी, 'हरी घास पर क्षण भर' (1949) इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास है। इस संग्रह में हम कवि की विचारगत भूमि में स्पष्ट फैलाव देख सकते हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे कवि का व्यक्तित्व अहम् की घुटन और कुंठा से बाहर निकलना चाहता है किंतु यह सभव नहीं हो पाता है और कवि पुन: अपने अस्तित्व के संकट से प्रताडित और शंकाकुल मानस लेकर अपने अहम् की वकालत करने लगता है। 'नदी के द्वीप' कविता इस दृष्टि से पाठय है, कवि में एक स्पष्ट परिवर्तन लक्षित किया जा सकता है और वह है बौद्धिकता के स्थान पर भाव प्रवणता का आधिक्य, फलत: प्रकृति, प्रणय तथा कतिपय अन्य विषयों से सम्बन्धित रचनाएँ अधिक आकर्षक बन पडी हैं। 'शरद' शीर्षक से कुछ पंक्तिया प्रस्तुत हैं।

''बादलों के चुम्बनों से खिल अयानी हरियाली
शरद की धूप में नहा-निखरकर हो गयी है मतबाली।
झुंड फीरों के अनेकों फबतियाँ कसते मँडराते।
भर रही है प्रान्तर में चुपचार लजीली शेफाली।''[10]

''इसमे प्रकृति और प्रणय का संगम है। हरी घास मुक्त जीवन के आमंत्रण का प्रतीक है।''[11]

यहाँ मुक्त जीवन की प्रतीक हरी घास प्रणय- बंधन के प्रतीक नागरिक जीवन को परस्पर परिपार्श्व में रखकर नगर पर व्यंग्य किया गया है -

''वह हम हों भी
तो यह हरी घास ही जाने
जिसके खुले निमंत्रण के बल

जग ने सदा उसें रौंदा है
और वह नही बोली
नही सुरे हम वह नागरी के नागरिकों से
जिनकी भाषा में अतिशय चिकनाई है साबुन की
किन्तु नही है करूणा।''[12]

इस प्रकार कवि की विचारधारा में पर्याप्त फैलाव आ गया है। सन् 1945 में अज्ञेय का पाँचवा कविता संग्रह 'बावरा अहेरी' प्रकाशित हुआ। इसमें 'अहेरी' शब्द आलोक का प्रतीक है जो बाहय जगत में प्रकृति के अंधकार और अंतजगत मे मन के तमस को मिटाता है। प्रणय और प्रकृति 'बावरा अहेरी' का मूल विषय है। आत्मनिवेदन का विश्लेषण एक अन्य महत्वपूर्ण विषय है। यद्यपि यहाँ भी कवि की विचारधारा पूर्ववत् है किंतु उसकी संवेदना का क्षेत्र निश्चय ही अधिक विस्तृत हो गया है। प्रकृति के चित्र अत्यंत रमणीक बनकर उभरे हैं-

''कैसा फैला है आकाश, भरा तारों से
भार मुक्त से तिर जाते हैं पछी जैसे बिना हिलायें।''

'बावरा अहेरी' काव्य-संग्रह में 'जाता हूँ', 'संध्या तारा', 'सबेरे-सबेरे तुम्हारा नाम', और 'वही रात' आदि प्रणयानुभूति सम्बन्धी कविताएँ भी है। 'छब्बीस जनवरी' भारत की स्वतत्रता पर एक महत्वपूर्ण साहित्यिक उपलब्धि है। इसमे समर्पण का स्वर मुखर है। हमने इसे अद्वितीय बलिदान के बल पर प्राप्त किया है। पर यह आलोक मंजूषा साधना की अंतिम सिध्दि नही है। अत साधना सतत आगे बढनी चाहिए।

''साधना रूकती नहीं
आलोक जैसे नही बँधता।
यह सुंदर मंजूषा भी
झर गिरा सुंदर फूल है पथ-कूल का
माँग पथ की इसी से चुकती नहीं।''[14]

'आत्मान्वेषय' में कवि जिस प्रकार तुम के प्रति समर्पित हुआ है उसी प्रकार उसकी परिणीत सूक्ष्म होती प्रणयानुभूति भी एक 'तुम' के प्रति निवेदित है।''[15] अत दोनो एक दुसरे मे अपना लय करते हुए एक समाहित और अखण्ड सत्ता में परिणत होने का उपक्रम करते है और अंत में एक रहस्य चेतना मे परिणत हो जाते है।

'इन्द्रधनु रौंदे हुए ऐ', यह अज्ञेय का छठा कविता संग्रह जिसकी प्रथम आवृति सन् 1956 की है। इसमें कुल 59 कविताएँ संग्रहीत हैं। इसमें कवित क्रमश रहस्यवाद की ओर उन्मुख प्रतीत होता है। 'बावरा अहेरी' में प्रकृति तत्व की प्रधानता है तो 'इंद्र धनु रौंदे थे' में कवि आत्मान्वेषण की दिशा में सक्रिय है। यद्यपि, कवि की यह अन्वेषणा मनुष्य को केन्द्र में रखती है।

अज्ञेय की कविता के केंद्र म है अनुभूति की सच्चाई। कवि की हर बात संवेदनाओं से होकर गुजरती है।

''मौन भी अभिव्यंजना है
जितना तुम्हारा सच है
उतना ही कहो।''[16]

'सत्य तो बहुत मिले', 'यही एक अमरत्व है', 'मैं तुम्हारा प्रतिभू हूं', आदि रचनाओं में आरोप का विशिष्ट आत्मनिवेदन है- ये संग्रह की रीढ़ हैं, इसमें वे सत्य केवल उसी को स्वीकारते हैं जो सत्य और आँसुओं के साथ अपनी अनुभूति में पला है।

सत्यान्वेषण की भूमिका का अगला विकास है- 'अरी ओ करूणा प्रभामय'। इस संग्रह की अनेक कविताओं में केवल अनुभूति या समर्पण ही नहीं है, सिध्द वचन भी है। यहाँ- अनुभूति पहचान बनकर सामने आ रही है। यह संग्रह चार खण्डों में विभाजित है- 'रोपयत्री', 'रूपकेकी', 'एक चीड़ का खाका', और 'द्वार हीन द्वार'। 'रोपयित्री' में कवि को सत्य की अब अस्पष्ट सी झलक दिखने लगी है, साधना बढ़ रही है, पर पूर्ण नहीं हुई हैं। इन कविताओं में रहस्वाद के नये आरोह हैं, कहीं-कहीं रहस्यात्मक प्रवृति के आधिक्य के कारण कवि उलटवासियाँ भी कहने लगता है। 'पहेली' शीर्षक कविता इसी प्रकार की है। जब शिष्य जाल लेकर मछली रूपी जीवात्मा को पकड़ने चला तो उसने जाल छीन लिया और कहा, ''हपले मछलियाँ तो पकड़ ला।''[17] इसी उलटी बात को समझने में शिष तप करते-करते वृद्ध हो गया और तब जाना कि-

''सहसा भेद गई तीखी आलोक किरण
अरे कब से बेचारी मछली
घिर अगाध से
सागर खोज रही हैं।''[18]

आगे तो रहस्यवाद चिंतन की बौध्दिक भूमिका में पहुँच जाता है और शैली अधिकाधिक प्रतीकात्मक होती चली जाती है।

''चुपचाप-चुपचाप
हम विराट में डूबे पुलकित
पर विराट हम में मिल जाए -
चुपचाप- चुपचाप।''[19]

'द्वार हीन द्वार' कविता इस संग्रह को 'ऑगन के पार द्वार' तक मिलाने वाली है। इसमें कवि सत्य के द्वार तक पहुँच गया है और द्वार खोल रहा है, पर खोलकर अदर पहुँच नहीं पाया है। आशय यह है कि सत्य अगाध है, उसका पार पाना असम्भव है।

'ऑगन के पार द्वार' कविता - सग्रह तीन खण्डों में विभाजित है- 'अत सलिता', 'चक्रान्त शिला' और 'असाध्य वीणा'। यह संग्रह वस्तुत अज्ञेय की रहस्यात्मक अभिव्यक्ति की अंतिम और महत्वपूर्ण कडी है। इसमें तीसरा खण्ड सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

'चक्रान्त शिला' की कविताओं में कवि शुध्द रहस्यवाद की भूमि का अवस्थित है। अंत सलिता' और 'असाध्य वीणा' में मौण अनुभूति तथा उनके द्वारा सर्व व्यापी जीवन की वही भूमिका है, जिसका अज्ञेय में क्रमश विकास होता गया है। इस सग्रह में आकर अज्ञेय की भाषा और पद-विन्यास में चमत्कारपूर्ण परिवर्तन हुआ है।

'चक्रान्त शिला' पूर्ण तथा आत्मा और तत्व का लोक है। तत्व के स्वरूप, उसकी सर्वव्यापी अद्वितीय सत्ता, उसकी अखिल करूणामयता आदि के अतिरिक्त आत्मा के साथ उसके परिणय का

निवेदन भी इन कविताओ में सुंदर बन पडा है।

'असाध्य वीणा' इस कविता- सग्रह का अतिम खण्ड है। यहाँ केशकम्बली गुफा-गेह की सगीत- कौशल सम्बन्धी गाथा संग्रथित की गई है। वज्रकीर्ति द्वारा निर्मित अति प्राचीन किरीटी तरू की जिस प्रबंची को राजा का कोई भी कलावंत न साध सका उसमें केशकम्बली ने संगीत अवतरण कर दिया। जनता पुकार उठी- ''है स्वरजित् ! धन्य! धन्य!''

''असाध्य वीणा' अज्ञेय की ही नहीं, हिन्दी कविता की भी एक 'सीमा चिन्ह' सिद्ध होगी। ऐसी सक्षम रचनाएँ जगा सकती हैं। 'असाध्य वीणा' के अनेक अर्थघटन हुए है और होगे और इसी में रचना की उर्वरता निहित है।''[20]

सन 1967 में भारतीय ज्ञानपीठ काशी से 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता संग्रह प्रकाशित हुआ। इसमें कुल 44 कविताएँ है। इन कविताओं में उदात्तभाव की काव्यमयी अभिव्यक्ति है। कवि जीवन के अनबुझे सत्य को 'छोटी सी ज्योति' कह कर सम्बोधित करता, जिसे कीी कीी कुहा से के धुंधल के में देखना कठिन हो जाता है। कवि की सम्मति है कि प्रेम को ककोई भी भूल नही सकता। वह एक ऐसी वस्तु है जो संसार के टूटते हुए लोगों को भी सहारा देती है। कवि प्यार के महत्व और अक्षुण्णुता को रेखाकित करता हुआ इस कविता- संकलन को इन पक्तियों से समाप्त करता है -

''जिसे (यार को) कुछ भी, कभी, कुछ से नही सकता मार
वही लो, वही रक्खो साज - संवार वह
कभी बुझने न वाला प्यार का अगार।

इस प्रकार 'भग्नदूत' से लेकर कितनी नावों में कितनी बार तक की काव्य यात्रा में अज्ञेय का काव्य भोगे हुए जीवन को आधार बनाकर अधिक सफल होता है। कारण यह है कि उस अनुभूति में इतनी अधिक सघनता होती है कि कवि को कुछ आरोपित करने का अवकाश ही नहीं मिलता। फल यह होता है कि बिना किसी दुरा- छिपाव के वह अपनी भावनाओं को शब्द बध्द करता जाता है। दुराव- छिपाव से रहित इस अभिव्यक्ति में पाठकों को तन्मय कर लेने की अद्भुत क्षमता होती है और वस्तुत यही अज्ञेय के काव्य की सफलता भी है।

संदर्भ सूची :-

1. डॉ. राकेश गुप्त, नया सप्तक,पृ.क्रं. 52
2. अज्ञेय, चिंता, भूमिका,पृ.क्रं.15
3. अज्ञेय, चिन्ता,पृ.क्रं.140
4. अज्ञेय, इत्यलम,पृ.क्रं.54
5. अज्ञेय, इत्यलम,पृ.क्रं.84
6. अज्ञेय, इत्यलम,पृ.क्रं.156
7. अज्ञेय, इत्यलम,पृ.क्रं.84
8. अज्ञेय, इत्यलम,पृ.क्रं.195
9. अज्ञेय, इत्यलम,पृ.क्रं.210
10. विद्यानिवास मिश्र, अज्ञेय,पृ.क्रं.42
11. सुमन झा, अज्ञेय क्रा काव्य,पृ.क्रं.92
12. अज्ञेय, हरी घास पर क्षण भर,पृ.क्रं.63 - 64
13. अज्ञेय, बावरा अहेरी,पृ.क्रं.40
14. अज्ञेय, बावरा अहेरी,पृ.क्रं.114
15. समुन झा, अज्ञेय का काव्य,पृ.क्रं.114
16. इन्द्रधनु रौंपे हुए थे, अज्ञेय,पृ.क्रं.14
17. अज्ञेय, त्रिशंकु,पृ.क्रं.87 - 88
18. अज्ञेय, अरी ओ करूणा प्रभामय,पृ.क्रं.87
19. अज्ञेय, अरी ओ करूणा प्रभामय,पृ.क्रं.71
20. भोलाभाई, अज्ञेय एक अध्ययन,पृ.क्रं.43 - 44